भारतीय विज्ञान संस्थान का जन्म

पी. बालाराम

अतीत के झरोखे में झांकने की इच्छावश हाल ही में मेरी नज़र दो किताबों पर पड़ी जो पिछले साल या शायद उससे पहले लिखी गई थीं। इनमें से एक किताब इतिहासकार रामचंद्र गुहा द्वारा लिखित *'इंडिया आफ़्टर गांधी : दी हिस्ट्री ऑफ दी वर्ल्ड्स लार्जेस्ट डेमोक्रेसी'* (पिकैडोर, 2007) है जो आज़ाद भारत के इतिहास या घटनाओं का लेखा-जोखा है। दूसरी किताब राजमोहन गांधी ने लिखी है- *'मोहनदास : ए ट्रू हिस्ट्री ऑफ़ ए मैन, हिज़ पीपल एंड एन एम्पायर'* (पेंगुइन/वाइकिंग, 2006)। यह महात्मा गांधी के बारे में राजमोहन के नितांत व्यक्तिगत विचारों पर आधारित है। दोनों पुस्तकें विस्तार से और व्यापक शोध के बाद लिखी गई हैं और दोनों लेखकों की अद्‌भुत प्रतिभा को सामने लाती हैं। इन किताबों के माध्यम से उन्होंने अतीत को इस प्रकार जीवंत कर दिया है कि आम पाठकों के दिमाग में भी आसानी से उतर जाता है। दोनों पुस्तकें न केवल इतिहास के बारे में सूचित व शिक्षित करती हैं, बल्कि कई मौकों पर प्रेरित भी करती हैं।

इतिहास लेखन में सबसे महत्वपूर्ण बात यह होती है कि पुस्तकालयों व अभिलेखागारों में लंबे अर्से पहले भुलाए जा चुके रिकार्ड्स की गहन पड़ताल करनी होती है। अतीत के प्रति आकर्षण ने ही मुझे भारतीय विज्ञान संस्थान (भाविस) के जन्म के बारे में सोचने को प्रेरित किया।

यह संस्थान शीघ्र ही सौवें साल में प्रवेश करने जा रहा है। भाविस का इतिहास भारत में उच्च शिक्षा और अनुसंधान, विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी गतिविधियों के विकास की कहानी से जुड़ा हुआ है, साथ ही उन घटनाओं के समानांतर भी चलता है जब राष्ट्रीय आंदोलन चरम पर था और ब्रिटिश शासन का सूरज डूबने को था। इन्हीं घटनाओं की परिणति भारत की स्वतंत्रता के रूप में हुई थी।

यह पिछली आधी शताब्दी में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी उद्यम के जन्म व विकास की भी कहानी है। मानव सेवा और अभूतपूर्व दृष्टिकोण या विज़न भी इस कहानी के अहम किरदार हैं।

भाविस देश का दूसरा वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान था। इसकी स्थापना 1909 में हुई थी। आधुनिक भारत का प्रथम वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान इंडियन एसोसिएशन फॉर दी कल्टीवेशन ऑफ साइंस (आई.ए.सी.एस.) माना जाता है जिसकी स्थापना वर्ष 1876 में महेंद्रलाल सरकार ने फादर लेफोंट के सहयोग से की थी। भाविस की स्थापना आई.ए.सी.एस. से बिल्कुल अलग ढंग से हुई थी।

इन दोनों संस्थानों के विकास का समग्र अध्ययन उन लोगों के लिए मार्गदर्शन का काम कर सकता है जो आज नए संस्थान खड़े करना चाहते हैं। भाविस के अतीत के छितरे हुए टुकड़ों को जोड़ने और भविष्य के लिए एक स्थाई अभिलेखागार बनाने के प्रयासों के दौरान मैंने महसूस किया कि किसी विज्ञान अनुसंधान संस्थान की नज़र में इतिहास का कोई विशेष महत्व नहीं है। हालांकि यह स्थिति निराशाजनक भी है मगर फिर भी भाविस की स्थापना के समय के सबक आज भी उपयोगी हो सकते हैं।

भारत के इस सबसे अहम विज्ञान संस्थान की स्थापना और उसके बाद की घटनाओं को जानने के लिए जमशेदजी टाटा की दो जीवनियों पर नज़र डालनी होगी। एक जीवनी करीब पचास साल पहले फैंक हैरिस ने लिखी थी - *'जमशेदजी नुसेरवानजी टाटा : ए क्रॉनिकल आफ हिज़ लाइफ़'* (ब्लैकी, 1958)। और दूसरी है हाल ही में प्रकाशित आर.एम. लाला लिखित जीवनी - *'फॉर दी लव ऑफ इंडिया : दी लाइफ एंड टाइम्स ऑफ जमशेदजी टाटा'* (पेंगुइन/वाइकिंग, 2004)। भाविस की स्थापना और उसके विकास के बारे में एक और किताब में उल्लेख मिलता है। यह किताब है बी.वी. सुब्बारायप्पा लिखित *'इन परस्यूट ऑफ़ एक्सलेंस'* (टाटा मैक्ग्रा हिल, 1992)।

जे.एन. टाटा ने एक अनुसंधान संस्थान या विश्वविद्यालय

की स्थापना पर अपनी सम्पत्ति का एक हिस्सा खर्च करने का प्रस्ताव दिया था। ये तीनों पुस्तकें टाटा के इस वादे और बाद की घटनाओं के बारे में विस्तार से बताती हैं। 1890 के दशक में टाटा का यह प्रस्ताव काफी दूरदर्शितापूर्ण था। मानव सेवा के उद्देश्य से दिए गए इस प्रस्ताव में एक खास बात यह भी थी कि वे भावी संस्थान के साथ अपना नाम संलग्न करना नहीं चाहते थे। इससे प्रस्ताव को सभी का समर्थन मिला। टाटा की इस योजना की दो पूर्व शर्तें थीं - एक, भारत सरकार का समर्थन हासिल करना होगा जिसकी शक्तियां दिल्ली में ब्रिटिश वायसराय के हाथों में थीं। दूसरी, संस्थान के लिए अनुदानित भूमि की पहचान करनी होगी।

ब्रिटिश सरकार ने 1905 में इसकी अनुमति दे दी और दो साल बाद 1907 में मैसूर के महाराजा ने संस्थान के लिए भूमि दान में दे दी। अंततः मई 1909 में संस्थान की स्थापना के लिए औपचारिक आदेश जारी हो गया। इस बीच 1904 में ही जे.एन. टाटा का निधन हो गया था। टाटा घराने में मानव हितार्थ कार्य करने की परंपरा रही है। लिहाज़ा, अनुसंधान संस्थान की स्थापना व विकास के प्रति दोराबजी व रतन टाटा भी प्रतिबद्ध रहे।

संस्थान के जन्म की गाथा में कई तत्व शामिल हैं। जे.एन. टाटा का विवेकानंद को लिखा पत्र इनमें से एक है। वे लिखते हैं, 'मेरा मानना है कि सन्यास की भावना का इससे बेहतर कोई इस्तेमाल नहीं हो सकता कि ऐसा एक मठ स्थापित किया जाए जहां लोग सामान्य जीवन जीते हुए प्राकृतिक व मानवीय विज्ञान के संवर्द्धन के लिए अपनी शेष ज़िंदगी समर्पित करें। मेरा विचार है कि अगर इस प्रकार के सन्यास के पक्ष में कोई सक्षम नेता धर्मयुद्ध छेड़े तो यह सन्यास व विज्ञान के प्रति महान सेवा होगी और इससे हमारे देश का नाम भी रोशन होगा, और मैं जानता हूं कि ऐसा सक्षम नेता विवेकानंद के अलावा कोई दूसरा नहीं हो सकता।' टाटा और विवेकानंद दोनों ने ही यह महसूस किया था कि भारत को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के लिए खुद के दम पर एक संस्थान की स्थापना करनी होगी। दुर्भाग्य से भाविस की स्थापना से पहले दोनों का निधन हो गया - टाटा का 1904 में और विवेकानंद का 1902 में।

आज भारत फिर एक संस्थान के निर्माण में जुटा हुआ है। इसके लिए कमरों के भीतर बैठकर ढेर सारी अच्छी-अच्छी योजनाएं बनाई जा सकती हैं, लेकिन संस्थान की स्थापना के पीछे क्या नज़रिया है, उसे परिभाषित करना और फिर साकार करना मुख्य चुनौती है। क्या अतीत से हम कुछ ज्ञान हासिल कर सकते हैं?

भाविस के निर्माण के लिए कैसी योजना बनाई गई थी? और उसे किस तरह से सफलतापूर्वक अमली जामा पहनाया गया था? इन सवालों के जवाब ज़ाहिर तौर पर काफी लंबे हैं और हज़ारों पन्नों के दस्तावेज़ों में छिपे हुए हैं। ये दस्तावेज़ दिल्ली स्थित राष्ट्रीय अभिलेखागार, पुणे स्थित टाटा अभिलेखागार और लंदन के पुस्तकालयों में रखे हुए हैं।

भाविस का प्रारंभिक इतिहास बुर्जोरजी पादशाह (1864-1941) और दो अंग्रेजों - भारत के तत्कालीन वायसराय जार्ज नैथेनील कर्ज़न (1859-1925) और संस्थान के प्रथम निदेशक मोरिस ट्रैवर्स (1872-1961) के साथ उनके जटिल सम्बंधों के इर्द-गिर्द घूमता है। पादशाह एक असाधारण शख्स थे जो टाटा के विज़न को लेकर प्रतिबद्ध थे। उन्होंने भाविस की स्थापना के लिए बहुत काम किया। पश्चिम के अनुभवों को जानने व उनसे सीखने के लिए उन्होंने 1896 से 1898 तक कई देशों की यात्राएं कीं। संस्थान की स्थापना को लेकर उन्होंने जो प्रारंभिक मसौदा तैयार किया (*इंस्टीट्यूट ऑफ़ साइंटिफिक रिसर्च फ़ॉर इंडिया, 1898*), उसे ब्रिटिश शासन के साथ लंबी चर्चाओं का शुरुआती बिंदु माना जा सकता है।

पादशाह का विचार था कि भाविस का विकास किसी

ब्रिटिश या युरोपीय विश्वविद्यालय की बजाय जॉन हॉपकिंस जैसे अमेरिकी शोध संस्थान की तर्ज़ पर किया जाना चाहिए। वर्ष 1898 से 1910 के बीच उपलब्ध अभिलेख सामग्री पर एक सरसरी निगाह डालने भर से साफ हो जाएगा कि टाटा के विज़न को मूर्त रूप देने में पादशाह की कितनी बड़ी भूमिका रही।

किम सीबैली की किताब '*हिस्ट्री ऑफ एजूकेशन*' में '*दी टाटास एंड यूनिवर्सिटी रिफॉर्म इन इंडिया, 1898-1914*' शीर्षक से लिखे अध्याय में सरकार की आपत्तियों के बावजूद पादशाह के अनवरत प्रयासों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसके अनुसार संस्थान की स्थापना का संघर्ष उस समय चरम पर पहुंच गया जब पादशाह ने सार्वजनिक रूप से घोषणा की थी कि वायसराय कर्ज़न को टाटा की योजना से 'सहानुभूति' है, लेकिन गृह सचिव ने तत्काल प्रतिक्रिया देते हुए ब्रिटेन को इससे अलग कर लिया था।

दिसंबर 1998 में जब कर्ज़न भारत के वायसराय बनकर बंबई पहुंचे तो जो सबसे पहला मुद्दा उनके सामने आया, वह संस्थान की स्थापना का प्रस्ताव ही था। इस मसले पर जे.एन. टाटा और पादशाह ने 31 दिसंबर 1898 को कर्ज़न से मुलाकात भी की थी।

सवाल यह है कि आखिर भाविस के इतिहास का अध्ययन क्यों किया जाए? किम सीबैली 1965-66 में आई.आई.टी. की स्थापना पर शोध करने भारत आए थे। वे लिखते हैं कि भारत में आई.आई.टी. की स्थापना में भारतीय विज्ञान संस्थान (बैंगलोर) मुख्य बौद्धिक व सामाजिक स्रोत बना था। दरअसल, भाविस और उसकी स्थापना में अहम योगदान देने वाले शलाका पुरुषों की पूर्ण कहानी अभी भी लिखी जानी है। अगर एक अच्छा लेखक मिल जाए तो यह कहानी वाकई पढ़ने लायक होगी। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***

फॉर्म 4 (नियम - 8 देखिए)

मासिक स्रोत विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स पत्रिका के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बंध में जानकारी

प्रकाशन	:	भोपाल
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
प्रकाशक का नाम	:	(सी.एन. सुब्रह्मण्यम) निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य, ई-7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016
मुद्रक का नाम	:	(सी.एन. सुब्रह्मण्यम) निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य एकलव्य, ई-7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016
सम्पादक का नाम	:	सुशील जोशी
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य, ई-7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016
उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है	:	(सी.एन. सुब्रह्मण्यम) निदेशक, एकलव्य
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	एकलव्य, ई-7/एच आई जी 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016

मैं सी.एन. सुब्रह्मण्यम, निदेशक, एकलव्य यह घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

सी.एन. सुब्रह्मण्यम,
निदेशक, एकलव्य

फरवरी 2008